# उ प सं हा र

# उपसंहार

'हँसते हैं, रोते हैं,' जैसे उनके दिन फिरे तथा 'सदाचार का तावीज' आदि कहानीसंग्रहों में हरिशंकर परसाईजी की ५०-६० कहानियाँ संकलित हैं। इसके अलावा और भी कहानियाँ देखने को मिलती है, जो इस संख्या में वृध्दि करती है। पर यहाँ संख्या की अपेक्षा उनका स्वरूप तथा निहित मूल्य देखना अधिक उचित होगा।

व्यंग्यकार मानवीय मूल्यों का विचारक होता है। साहित्य उसका लक्ष्य नहीं, माध्यम होता है। मनुष्य और मानवीय मूल्यों को प्रस्तुत करना व्यंग्यकार का उद्देश्य होता है। शायद इसीलिये ही हरिशंकर परसाई एक गद्यलेखक होते हुये भी कवि और द्रष्टा लगते है। प्राय: पाठकों को अभिभूत करने की जो ताकत उत्कृष्ट कविताओं मे होती है, उसीका दर्शन 'हँसते हैं, रोते हैं' इस कहानीसंग्रह की समस्त कहानियों में होता है। इसी से रचनाकार की प्रतिबध्दता का एहसास होता है। हरिशंकर परसाई की प्रतिबध्दता यथार्थवादी, वैज्ञानिक तथा वैचारिक निष्ठापर आधारित है और उसका मूल उनकी मानवीय सवेंदना और रागात्मकतामें है। इसी आधारपर ही 'हँसते हैं, रोते हैं' इस कहानीसंग्रह की कहानियाँ उन्हें एक द्रष्टा के रूपमें साबित करने में कामयाब हुओ है। इस संग्रह की प्राय: सभी कहानियाँ वैचारिक आस्था-वाले यथार्थ की दृष्टि व्यंग्य की गंगा-यमुना तथा करूणा की सरस्वती उपस्थित करती है।

अपनी प्रारंभिक कहानियों में परसाईजी अपने आसपास की जिंदगी से जुडकर चलते हुये दिखायी देते है। इस कहानी संग्रह में निम्न-मध्यमवर्गीय अभावों और विडंबनाओं को उभारा गया है। परंतु उसमें अतिशय पैनापन या सामाजिक विरूपताओं के प्रति वह तल्खी नहीं है, जो आगे चलकर परसाई की खासियत बन गयी। इसलिये हँसते हैं, रोते हैं

संग्रह की कहानियों को सामाजिक, धार्मिक या आर्थिक व्यंग्य में विभाजित न करते हुये संपूर्ण कहानी संग्रह के बारे में चर्चा करना अधिक उचित होगा। इस दृष्टि से विचार करते समय ऐसा लगता है कि, इस संग्रह की अधिकांश कहानियाँ भावुकता से युक्त होते हुए भी शिल्प के कच्चेपन के कारण विशेष प्रभावी नहीं लगती।

`भीतर का घाव` हिंदी की एक श्रेष्ठ कहानी है। इसमें यथार्थ की मार्मिक तस्वीर खिंची गयी है। यह कहानी प्रथम पुरुष में संस्मरणात्मक शैली में लिखी है, फिर भी संपूर्ण सामाजिक चेतना को झकझोर डालने की क्षमता रखती है। कहानी में पाखंड प्रदर्शन, आर्थिक दबावों से उत्पन्न कलुषित मानसिकता वाले माता-पिता, चाची के चरित्र की पार्श्वभूमीपर सहज स्नेहमय भैया और भाभी का चरित्र चित्रित किया गया है। ये बातें किशोरों के लिये विशेष आकर्षित की रही हैं, साथ में रचनाकार की प्रौढता का परिचय भी दिलाती है। रचनात्मक शिल्प तथा व्यक्तिगत संवेदना के कारण कहानी गहन और मार्मिक बन पड़ी है।

यद्यपि यह कहानी आज से तीस-पैंतीस साल पहले लिखी है, फिर भी उसकी प्रासंगिकता तीस वर्षों के बाद भी उतनी ही है। अध्ययन-अध्यापन करनेवाला आदर्श पुत्र माता-पिता और चाची के लिये शायद उससे भी ज्यादा महत्वहीन है, क्योंकि वह अल्पवेतन पानेवाला अध्यापक है। अध्यापन की पत्नी को उसके सास-ससुर मनुष्य का दर्जा देने के लिये भी तैयार नहीं है, क्योंकि वह अपने साथ में ढेर सारा दहेज लेकर नहीं आयी है। यहाँ हम जान जाते है कि, यह हमारी पूँजीवादी संस्कृति की परिणति है। फिर भी हम कह सकते है कि, यह केवल सुधारवादी दृष्टिकोणपर आधारित दहेज - विरोधी रचना नहीं है, बल्कि समाज की बुनियादी विकृतिपर आघात करनेवाला हथियार है।

साथ में युग को मूलभूत गहराई तक आंदोलित करनेवाला दस्तावेज भी है। इस कहानी के माध्यम से परसाईजी ने सत्य का उद्घाटन करने का तथा पाठकों को झकझोर डालने का काम किया है। परसाईजी पहले खुद मूल्यों को और स्थितियों को देखते और समझाते हैं और बाद में पाठकों कोभी उसीतरह से देखने और समझाने के लिये उत्साहित करते हैं। सत्यपर पड़े नकार को हटाने का काम करनेवाले तथा पाठकों के भ्रमों, पाखंडो और कुंठाओं को नष्ट करने का प्रयत्न करनेवाले परसाईजी एक खतरनाक लेखक के रूपमें सामने आते हैं।

इस संग्रह की अन्य कहानियाँ भी सम सामयिक संदर्भों में प्रासंगिक है। `पडोसी के बच्चे` यह कहानी मानव के बीच समान अधिकार की अप्रत्यक्ष वकालत करती है और साथ ही गैरबराबरी या असमानता की भावनापर चोट भी करती है। इसीलिये तो इस कहानी को केवल परिवार नियोजन के संदर्भ में लिखी गयी कहानी कहा नहीं जा सकता। न जनसंख्या को विस्फाटित करना इसका उद्देश्य है। यद्यपि कहानी में काव्य का स्वर प्रधान है, फिर भी व्यंग्यकार का तेजस्वी स्वर अलग से महसूस होता है।

`क्रांति हो गयी` कहानी वस्तुत: क्रांति के अवैज्ञानिक संभ्रमजन्य नारे का उपहास करने के लिये नहीं लिखी है, पर पूरी कहानी पढ़नेपर ऐसा ही लगने लगता है।

पूँजीवादी समाज में प्रचलित प्यार-प्रेम के ढकोसले को मुखरित करनेवाली `क्या कहा` और `साडीका रंग` ये दो कहानियाँ इसी संग्रह में संगृहीत है। इन कहानियोंकी विशेषता यह है कि, लेखक ने इन कहानियों के माध्यम से किशोरों के मन में उत्पन्न `प्लेटानिक लव` की बचकाना धारणा की जड़पर आघात किया है। इसालिये तो ये दोनों

कहानियाँ सशक्त व्यंग्य कथाओं के प्रभावी रूपमें हमारे सामने आती है।

सामाजिक उत्पीड़न को वाणी देने के प्रयास में परसाई ने 'नरकसे बोल रहा हूँ' और 'मूक का स्वर' ये दो कहानियाँ लिखी है, जो संपूर्ण सामाजिक, राजनैतिक व्यवस्था के विरोध में खड़ी होकर विद्रोह करने के लिये लोगों को जागृत करने का काम करती है।

'सेवा का शोक' जैसी कहानियाँ मानवीय पीड़ा के संदर्भ में नैतिक - सामाजिक मान्यताओं की विकृतियों को पर्याप्त विश्वसनीय और प्रभावशाली ढंग से अंकित करने में सफल हुवी है।

'हंसतें है, रोतें है', इस संग्रह की अन्य कहानियों में करूणा के साथ साथ विकृतियों को नष्ट करने की सामर्थ्य रखनेवाला, तेज़ धारवाला व्यंग्य भी है।

व्यंग्य के साथ करूणा के पुट का विचित्र और विरोधी तत्वों का मिश्रण एकदम सहज तथा नैसर्गिक रूपमें परसाईजी की रचनाओं में पाया जाता है। आगे चलकर देखने को मिलता है कि, उनकी रचनाओं में व्यंग्य की धार तेज़ होती गयी है और मानवीय करूणा का अंश धीरे धीरे घटने लगा है। इसीलिये तो कृष्णाकुमार श्रीवास्तव ने उनके संदर्भ में कहा है - "हिंदी के पहले विद्रोही कवि कबीर नें परसाई को बहुत प्रभावित किया है। यदि हरिशंकर परसाई १५ वीं या १६ वीं शताब्दी में पैदा होते तो कबीर होते और यदि कबीर बीसवीं शताब्दी में पैदा होते तो हरिशंकर परसाई होते। (१)

परसाईजी के परवर्ती लेखन में जो प्रहार है, वह आक्रोश की स्पष्ट अभिव्यक्ति है उसमें पौरूष स्पष्ट रूपसे दिखायी देता है। इसका

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

मुख्य कारण यह है कि, परसाई अपने व्यक्तिगत दायरे से बाहर निकल कर आये और संपूर्ण मनुष्यता को बनाने - बिगाड़नेवाली समस्याओंपर गौर करने लगे। इसी प्रयास में वे पाखंड और भ्रष्टाचार को बेनकाब करते हैं और उनसे सावधान रहने का संदेश भी देते हैं। वे सुनार की कोमलता से नहीं, लुहार की पौरुषता से प्रहार करते है।

'हँसते हैं, रोते हैं,' से आगे चलकर जब हरिशंकर परसाईजी के लेखकीय विकासक्रम के बारे में सोचा जाता है, तो सबसे पहले एक बात ध्यान में आती है कि, समाज में जो सरल, सीधे -सादे, ईमानदार लोग हैं, वे ही समाज में पाये जानेवाले असत्य और विरूपताओं का शिकार बने हुये हैं। लेखक ने प्राप्त की हुवी यह जानकारी इस बात का संकेत देता है कि, ऐसे लोगों के सार्थक ढंग से जीने की इच्छा तथा संघर्ष की की भावना से वे परिचित हैं।

अपने समय में स्थित विडंबनाओं तथा कुरूपताओं को अतिशय सहजता के साथ प्रस्तुत करने का प्रयत्न परसाईजी ने 'जैसे उनके दिन फिरे' तथा 'सदाचार का तावीज' आदि कहानीसंग्रहों में किया है। आज़ादी के बाद के भारत की एक सही तस्वीर इन कहानियों के आधार-पर उतारी जा सकती है। इन कहानियों को पढ़नेपर हम समझ जाते है कि, इनमें राजनीति, शिक्षापध्दति, शासनतंत्र, नौकरशाही, अफसरशाही, साहित्य तथा कला क्षेत्र की विकृतियाँ, धार्मिक पाखंड, बिगड़ी हुवी सामाजिक स्थिति अमानवीय व्यवहार, नैतिकताका अध:-पतन जैसे कितने ही विषयों को व्यंग्य का लक्ष्य बनाया गया हैं ।

'मौलाना का लड़का पादरी की लड़की, 'राग-विराग', सदाचार का तावीज', 'भोलाराम का जीव', 'एक तृप्त आदमी की कहानी, 'मुंडन आदि कहानियों का उल्लेख परसाईजी की प्रतिनिधि

कहानियों के रूपमें किया जा सकता है। इन कथाओं में प्राप्त आशयों की व्यापकता तथा निहित तथ्य की सार्थकता के आधारपर परसाईजी के रचनासंसार तथा जिम्मेदारियों का अहसास किया जा सकता है। इन कहानियों की विशेषता यह है कि, इनमें एक ओर राजनीति और शासनतंत्र की विकृतियों तथा कार्यपध्दति की तीखी आलोचना की गयी है, साथ में साधारण आदमी की यातनाओं और शोषण की स्थिति में उत्पन्न महत्वाकांक्षा शून्य मानसिकता का उल्लेख किया गया।

धर्म और अध्यात्म पूँजीवाद के पोषक वातावरण में धूर्तता, छद्म और ढोंग का पर्याय बनकर व्यक्त होता है। इस बात का यथार्थवादी उद्घाटन परसाईजी ने अपनी परवर्ती कहानियों मे किया है।

स्त्री पुरूषों के संबंधों का वर्णन करनेवाली कहानिओं का परसाईजी में प्राय: अभाव है। उन्होंने सामंती और अर्धसामंती समाज में स्त्री की जो स्थिति है, उसपर सार्थक और अधिकारपूर्ण टिप्पणी की है। मध्यमवर्गीय घर-संसार की असंगतियों को व्यक्त करनेवाले नयी कहानी आंदोलन के लेखकों की विचारधारा और परसाईजी की विचारधारा में अंतर दिखायी देता है। क्योंकि जिस वर्ग की मनोभूमि को उन्होंने नींव के रूपमें माना है, जिसके आधारपर संपूर्ण समाज के क्रियाकलापों को देखने की चेष्टा करते है, वह मनोभूमि कोरी मध्यमवर्गीय मनोभूमि नहीं है। स्वाधीन भारत के शासक वर्ग के चरित्र की सही पहचान, उससे निर्मित नुकसान देह परिणामों के साथ साथ सामाजिक यथार्थ की असंगतियों का एक पूरा संसार परसाई जी के पास है। इसीलिये तो सन १९५० के बाद के भारत के यथार्थ में निहित टकरावों, विडंबनाओं, तथा विकृतियों को परसाई के कहानियों में देखा जा सकता है। लोकतंत्र के भीतर मौजूद असंगतियों को उद्घाटित करना उनके रचनाशीलता की सबसे बड़ी उपलब्धी मानी जा सकती हैं।

सारांश रूपमें कहा जा सकता है कि, परसाईजी की कहानियों में राजनीतिक दृष्टि है, राजनीति और साहित्य के बीच स्थापित घनिष्ठता है, जिंदगी की समझ में सहभागी होनेवालों से आत्मालोचनकी प्रक्रिया से निर्मित सुसंवाद है।

समकालीन लेखन की धारा से जुड़ा हुआ उनका व्यंग्य लेखन संस्कृति के नामपर स्थापित संस्थाओं के दुरूपयोग को अपने व्यंग्य का निशाना बनाता हैं। शिक्षा संस्कृति के परिवर्तित मूल्यों का पर्दाफाश करता है। आज के समाज में फैल रहे जातिवाद का विष समाजवादी कल्पना को नुकसान पहुँचाता हैं। लोकतंत्रीय ढाँचे के रूपमें जो समाज आज हम देखते हैं, वह संप्रदायवाद को जातिवाद से काटना चाहता है। परिणामत: पतनोन्मुख संकीर्णता आज के समाज की विशेषता बन गयी है। ऐसा टूटा हुआ, विभाजित, सांस्कृतिक दृष्टिसे विपन्न समाज परसाईजीकी कहानियों में देखने को मिलता है।

संसदीय राजनीति के कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे, समाजवादी व्यवस्था में पूँजीवाद के हिमायती लोगों की भाषा, नैतिक संवेदना से शून्य स्वार्थपरक कामचलाऊ वृत्ति, `राष्ट्रीय एकता` जैसी शक्तिशाली बात का बिल्कुल एक खोखला नारा बनकर रह जाना जैसे कितने ही विषयोंपर परसाईजी ने टीका टिप्पणी की है।

केवल रोजी-रोटी कमानेवाले या अपनी ही सुख-सुविधाओं की प्राप्ति में लगे लोगों से परसाईजी बिल्कुल अलग हैं। एक जागरूक व्यंग्यकार के नाते उनका व्यंग्य सामाजिक जीवन को चरमरा देता है। उनके व्यंग्य में नयी चेतना का उन्मेश और आक्रोश पाया जाता है। उनमें यथार्थ को आर-पार देखने की दृष्टि है। `मनुष्य` और `समाज` का एक

आदर्श रूप सामने रखकर चलनेवाले परसाईजी की रचनाओं की समीक्षा करते समय मनोवैज्ञानिक दबाव से मुक्त होकर काम करने की जरूरत है। क्योंकि तभी वस्तुगत निष्कर्षों की संभावना की जा सकती है।

परसाईजी के व्यक्तित्व को एक संपूर्ण और अविस्मरणीय चरित्र के रूपमें देख सकते है। सिर्फ प्रगतिशील आंदोलन में नहीं, हिंदी की जातीय परंपरा में परसाई का मूल्यांकन करना जरूरी है, जिस परंपरा में वे सिध्दों, नाथों और कबीर से जुड़े हैं। प्रेमचंद से छूटा हुआ काम पूरा करनेवाले परसाई सचमुच एक महान व्यंग्यकार हैं।

अपने आशयों तथा प्रकारों मे परसाईजी पूर्णरूपसे वर्तमान को समर्पित है। ऐसा इसलिए कहा जा सकता है कि, उन्हों ने काल का कोई बंधन नहीं माना। हजारों साल पहले वाली बात हो या हजारों साल बाद का, समयकी दूरी का बोध एक रचना कौशल के रूपमें प्रस्तुत किया है। आकार की दृष्टि से छोटी होनेवाली उनकी कहानियों में पुरानी मान्यताओं का अस्वीकार दिखायी देता है। उन्होंने अपने कथ्य के अनुरूप अपने शिल्पका निर्माण किया है। इसीलिये तो इतिहास, पुराण, लोककथा, लोकवार्ता तथा फैंटेसी जैसी सारी चीज़े उनके यहाँ मौजूद है। उन्होंने निबंधपरक, इन्टरव्यूपरक, संस्मरणपरक, लघुकथात्मक, जाति, लिफ्ट, खेती जैसी भिनी कथाएँ, दीर्घ कहानी, तथा लघु उपन्यास आदि के रूपमें विधि और स्वरूप की दृष्टि से बहुविधात्मक तथा बहु-रूपात्मक व्यंग्य साहित्य की निर्मिती की हैं। कहानी के क्षेत्र में स्वरूप की दृष्टि से परसाईजी के लेखन में विशेष रूपसे विविधता पायी जाती है। 'प्रेमियोंकी वापसी' जैसी फैंटेसीपरक कथाएँ उन्होंने लिखी है, तो कुछ कथाएँ मिथक और पुराण-प्रसंगोपर आधारित हैं। जैसे - लंका विजय के बाद, सुदामा के चावल आदि। बैताल कथाओं की शैली में

BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

लिखी ' बैताल की छब्बीसवीं, सत्ताईसवीं तथा अठ्ठाईसवीं ' कथाओं के साथ साथ फैंटेसी और मिथक का मिश्रण कर के लिखी ' भोलाराम का जीव, त्रिशंकु बेचारा ' जैसी कहानियाँ भी उनमें देखने को मिलती हैं। प्रेमाख्यानों पर आधारित कुछ कहानियाँ लिखी है, तो ' दस दिन का अनशन ' जैसी दिनचर्यात्मक कहानियाँ भी लिखी हैं। स्वरूप की दृष्टि से इतनी विविधता हिंदी के अन्य किसी भी कहानीकार में देखने को नहीं मिलती। अपने व्यंग्य के लिये परसाईजी ने जिस समर्थ भाषा का प्रयोग किया है, उसका अपना एक नया रूख है, नयी भंगिमाएँ और आक्रमण करने का एक नया कौशल हैं। इसीलिये तो कहा जा सकता है कि, परसाईजी सार्थक व्यंग्य निर्मिति में निश्चित रूप से एकमेव हैं।

परसाईजी की कहानियों के व्यंग्य की विशेषताएँ।

हरिशंकर परसाईजी का व्यंग्य लेखन समाज प्रतिबध्द साहित्य के अंतर्गत आता है। मानसिक परिवर्तन के द्वारा सामाजिक परिवर्तन की पृष्ठभूमि तैयार करना परसाईजी के व्यंग्यलेखन का मुख्य उद्देश्य है। संपूर्ण जनमानस को भावात्मक सुख या आनंद की ओर ले जानेवाला साहित्य ही समाज में अधिक समयतक जिंदा रहता है। लेखन में भावतन्मयता तो आवश्यक है, परंतु उसका ध्येय पाठकों में वैचारिक विश्लेषण की सहायता से सामाजिक मूल्यों और कला-मूल्यों पर नये सिरेसे बहस के लिये तैयारी करना है। अपने ध्येय में परसाईजी पूरी तरहसे कामयाब हुवे है। अपने व्यंग्य लेखन के माध्यम से वे बहुत कुछ जरूरी सामाजिक और राष्ट्रीय विषयों की बहस में शामिल होते दिखायी देते है।

परसाईजी की संवेदनात्मक शक्ति अद्वितीय है, क्योंकि उन्होंने प्रेमचंद की तरह जनसामान्य को अपना विषय बनाया हैं। समाज व्यवस्था में परिवर्तन होता है, मनुष्य के भीतरी जगत में भी निरंतर बदलाव आता है और उसे अपने मूल संस्कारों में परिवर्तन लाना जरूरी होता है। इतिहास के ऐसे क्रम में मनुष्य के भीतर परिवर्तन को पकड़ने की तथा नयी रूचियों के अनुसार मर्यादाओं के दायरे में रहकर नयी मंजिल निश्चित करने का उत्तरदायित्व लेखकपर होता है। इसी उत्तरदायित्व को निभाने की पूरी कोशिश परसाईजी में दिखायी देती है।

इस कोशिश में परसाई अपने राष्ट्र और स्वयं के चेहरे को पहचानने के लिये धर्म, नीति, संस्कृति और कला को महत्व देनेवाली सामाजिकता के बीच में दिखायी देनेवाली गरीबी, बदमाशी, कट्टर जातिवाद, सांप्रदायिकता, राष्ट्रविरोधी प्रादेशिकता, भाषावाद, मानसिक गुलामी, राजनीतिक भ्रष्टाचार, अंधविश्वास, स्वार्थी वृत्ति

गहरी किस्मकी चालाकी और धूर्तता के साथ आँखें मिलाने की प्रेरणा और शक्ति प्रदान करते हैं। इस समय हम महसूस करते हैं कि, यह हमारी ही वास्तविक दुनिया है, जिसके निर्माता भी हम हैं और शिकार भी हम हैं। यह केवल व्यंग्यकार की कल्पना का जगत नहीं है।

वर्तमान जीवनमें जो कष्टदायक विसंगतियाँ हैं, उनके प्रति परसाईजी के मन में घृणा का भाव है। इसीलिये तो उनका मूल स्वर परिवर्तन के लिये विशेष अनुकूल दिखायी देता है। शायद इसीलिये ही उन्होंने अपने लेखन का मुख्य आधार व्यंग्य को बना लिया है। व्यंग्य के लिये प्रयुक्त उनका एक एक शब्द आक्रमण की ताकद रखता है और उनके मन के ज्वालामुखी को जन चेतना तक जोडने का मार्ग भी ढूँढ लेता है।

देश की नौकरशाही के संपूर्ण चरित्र को अपने व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त करने का ऐतिहासिक काम करनेवाले परसाईजी निश्चित रूपसे गौरव के पात्र है। इस प्रयास में उन्होंने नौकरशाही के स्वेच्छाचारी वातावरण को बेपर्दा किया है, समाजवाद के सपने देखनेवाले राजनीतिक दलों की वैचारिक संकुचितता व्यक्त की है। वर्ग संघर्ष के सिध्दांतपर अपनी वैचारिक प्रक्रिया से ही समाजवाद स्थापित होता है, कागजी घोडे नचाने से नहीं ऐसी परसाईजी की मान्यता है।

परसाईजी पूरी तरहसे भारतीय जनता के लिये समर्पित एक जिम्मेदार, कलम के सिपाही है, जो जनता की खातिर किसी को भी यहाँतक की अपने आप को भी माफ नहीं करते।

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी के क्षेत्र में प्रगतिशील आंदोलन के

समय में उपजे व्यंग्य के इस माध्यम में सामाजिक यथार्थ को पहचानने की, उसे पकड़ने की सशक्त तथा अभिव्यक्त करने की ताकद है। शायद इसीलिये ही इस माध्यम को स्वतंत्र रूपमें सामने लाया गया।

पत्र-पत्रिकाएँ, समाचार पत्रों के प्रकाशन, तथा आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्रों की क्रियाओं से व्यंग्य का संबंध जुड़ता गया। इसी सहयोग के फलस्वरूप व्यंग्य की स्वतंत्र जमीन विकसित और विस्तारित होती गयी। आज हम देखते हैं कि, अपने समय के सामाजिक यथार्थ से प्रगाढ़ और मजबूत रिश्ता कायम करनेवाली यह विधा विशेष लोकप्रिय हुवी। व्यंग्य की लोकप्रियता के लिये जो कोशिशें की गयी थीं, उसमें भारतेंदु ने पहला कदम उठाया था, तो परसाईजी की रचनाओं में उसका अधिक प्रभावी रूप दिखाई देता है।

परसाईजी साहित्य को समाज को बदलने का एक प्रभावी अथियार मानते है। एक साहित्यकार होंने के नाते इन्सानियत और रचनाशीलता को जीवित रखनेवाली प्रवृत्ति को विशेष महत्व देते है। परसाईजी के पूर्ववर्ती साहित्यकार ईमानदार जरूर थे, पर उनमें सामाजिक आशयोंकी संपन्नता नहीं दिखायी देती। परसाईजी में सामाजिक बदलाव के लिये आवश्यक क्रांतिकारी आशयों की कोई कमी नहीं थी, साथ में एक जागृत क्रियाशीलता भी थी। इसीसे उनकी सामाजिक निष्ठा ही प्रतीत होती है। इस विशिष्टता के लिये वे अपने पूर्ववर्ती साहित्यकारों का ही ऋण मानते हैं।

मानवीय प्रतिबध्दता, समाज की जटिल गतिविधियों की सही समझ और पकड़, सामाजिक जटिलताओं में भी इन्सान और इन्सानियत को पहचानने की उनकी सूझबूझ निश्चित रूपसे सराहनीय है। इसीसे पायी ऊँचाई ही उन्हें उनके पूर्ववर्ती तथा समकालीन व्यंग्यकारों से अलग साबित करती हैं।

मूल्यांकन :

हिंदी साहित्य में व्यंग्य को प्रतिष्ठा देने का महत्वपूर्ण कार्य परसाईजी ने किया है। वैसे देखा जायें तो साहित्य की प्रत्येक विधा में - काव्य, उपन्यास, नाटक, कहानी, निबंध - आदि में व्यंग्य का प्रयोग हुआ है। पर पूर्ण रूप से व्यंग्य के उद्देश्य से प्रेरित होकर साहित्य लिखने-वालों में परसाईजी मैभणि है।

हिंदी साहित्य में आज जो व्यंग्य साहित्य की धारा प्रवाहित हुवी है, उसे तेज़ बनाने का बहुत कुछ श्रेय परसाईजी को है। उनके व्यंग्य का स्वरूप व्यापक है। वैयक्तिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, प्रशासनिक जैसे अनेक विषयों को उन्होंने अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया है। उनके व्यंग्य का उद्देश्य सिर्फ चोट करना और मजा लेना नहीं है, बल्कि वे वैयक्तिक और सामाजिक जीवन में आमूलाग्र परिवर्तन चाहते हैं। एक स्वस्थ और सुदृढ समाज की स्थापना करना चाहते है। इसी कारण पर-साईजी ने ऐसे हर एक व्यक्ति को, वस्तु को, प्रवृत्ति को, विचार को अपने व्यंग्य का निशाना बनाया है, जो समाज विघातक हो। वैसे देखा जाये तो मानवता वाद की स्थापना करना ही परसाईजी के व्यंग्य का उद्देश्य है। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये परसाईजी ने कोई एक निश्चित साहित्य विधा को साधन नहीं बनाया है। विषय और प्रकृति के अनुसार जो विधा उचित लगी उसका उन्होंने बड़ी सहजता और सरलता के साथ प्रयोग किया है। पर कहानी के छोटे से कलेवर में भी एक बहुत बड़ा उद्देश्य प्रस्तुत करने का उनका कौशल निश्चित रूप से अनोखा है। परसाईजी का समग्र व्यंग्य लेखन स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य की एक महान उपलब्धि है।

# उपसंहार

## संदर्भ सूची

१) `गाँवन देखी` - संपादक कमलाप्रसाद

'अपनी शताब्दी का कबीर' में से - कृष्णकुमार श्रीवास्तव

पृ. ८३